# श्री शंकर शिक्षायतन

## वैदिक शोध केन्द्र

# सदसद्वादविमर्श

## <u>प्रतिवेदन</u>

पण्डित मधुसूदन ओझाजी ने ऋग्वेद के नासदीयसूक्त एवं उसके आधार पर ब्राह्मणों, आरण्यकों एवं अन्य परवर्ती वैदिक ग्रन्थों में प्रतिपादित सृष्टिविषयक सन्दर्भों का आलोडन करते हुए उनको आधार बना कर सृष्टिविषयक पूर्वपक्ष के रूप में व्याख्यायित आवरणवाद, व्योमवाद, अम्भोवाद एवं अपरवाद आदि मतों के स्पष्टतया प्रतिपादन हेतु जिन १० वादग्रन्थों का प्रणयन किया है उनमें **'सदसद्वाद'** नामक ग्रन्थ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस ग्रन्थ में सृष्टिप्रतिपादक पूर्वपक्ष में रूप में ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में उद्धृत सृष्टिविषयक प्रथम मत सदसद्वाद का स्पष्टतया प्रतिपादन किया गया है। इसी ग्रन्थ को आधार बनाकर श्री शंकर शिक्षायतन (वैदिक शोध केन्द्र) नई दिल्ली द्वारा दिनांक २९ मई २०२१ को एक राष्ट्रीय वेब संगोष्ठी का समायोजन किया गया। यह समायोजन शिक्षायतन द्वारा सृष्टिविषयक वादग्रन्थविमर्श शृखला के अन्तर्गत प्रवहमान इस वर्ष का पांचवां समायोजन था।

ओझाजी ने सदसद्वाद ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही सत्, असत और सत्-असत् इन तीनों प्रकार के तत्त्वों के प्रमाण के लिए मूलस्रोत के रूप में वैदिक मन्त्रों को उद्धृत किया है। सम्पूर्ण ग्रन्थ कुल ७ अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्यायों में तीन-तीन अधिकरण हैं जिनमें अनेक विषयों का प्रतिपादन किया गया है। यहां संक्षेप में ७ अध्यायों के विषय-वस्तु निम्नलिखित हैं-

प्रत्ययाद्वैत-विमर्श नामक प्रथम अध्याय में कुल ३ अधिकरण हैं। जिनमें क्रमशः सद्वाद, असद्वाद एवं सदसद्वाद का प्रतिपादन है। प्रथम अधिकरण में ब्राह्मण गन्थों के आलोक में नित्यविज्ञानवाद पर विचार किया गया है। द्रष्टा (देखने वाला) दृश्य (संपूर्ण जगत्) और दृक् (चक्षु) इन तीनों को त्रिपुटी कहते हैं, इस अध्याय में सबसे पहले इसी त्रिपुटी का वर्णन है। इसके बाद आत्मा के जाग्रत्, सुषुप्ति, स्वप्न, सम्मोह, मूर्च्छा, मृत्यु और मुक्ति इन सात अवस्थाओं का वर्णन है। सत्ता, चेतना, आनन्द, कर्म, नाम और रूप इन छह भावनाओं का वर्णन विस्तार से इसमें किया गया है। द्वितीय अधिकरण में क्षणिकविज्ञानवाद के प्रतिपादन के क्रम में श्रमणमत का प्रसंग आता है। यहाँ आर्यचतुष्टय का एवं आत्मा से सम्बन्धित दुःखविवेक, रूपस्कन्ध, संज्ञास्कन्ध, संस्कारस्कन्ध, विज्ञानस्कन्ध, वेदनास्कन्ध, समुदायविवेक, निरोधविवेक और मार्गविवेक का वर्णन प्राप्त होता है। तृतीय अधिकरण में आनन्दविज्ञानवाद से सम्बद्ध मध्यस्थमत पर विचार किया गया है। इसके अन्तर्गत अस्ति-भाति,

सामान्य-विशेष-समवाय, भाव-अभाव, सत्-असत्, द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य-विशेष और भाव-अभाव-अद्वैत का विचार किया गया है।

द्वितीय अध्याय का नाम प्रकृत्यद्वैत-विमर्श है । इसमें कर्माद्वैतसिद्धान्त का और श्रमणमत पर प्रथम अधिकरण है। इस प्रथम अधिकरण में असद्वाद की व्याख्या की गयी है। द्वितीय अधिकरण में ब्राह्मणग्रन्थ अभिमत ब्रह्माद्वैतवाद-सिद्धान्त का प्रतिपादन है। यह सिद्धान्त सद्वाद से संबद्ध है। तृतीय अधिकरण में मध्यस्थमत प्रतिपादित है जिसमें द्वैताद्वैतसिद्धान्त पर विशद वर्णन किया गया है।

तृतीय अध्याय का नाम तादात्म्यवाद-विमर्श है। इस अध्याय के प्रथम अधिकरण में रस-बल की एकता का सिद्धान्त मध्यस्थमत के रूप में वर्णित है। द्वितीय अधिकरण का नाम बलसारत्व-सिद्धान्त जो श्रमण सिद्धान्त के रूप में व्याख्यायित है। तृतीय अधिकरण में ब्राह्मण-ग्रन्थ से संबन्धित रस-सारत्व-सिद्धान्त का वर्णन है।

चतुर्थ अध्याय का नाम अभिकार्य-विमर्श है। इसके प्रथम अधिकरण में असत्कार्यवाद का सिद्धान्त न्यायशास्त्र के अनुसार है। यह असद्वाद है। द्वितीय अधिकरण का विषय सत्कार्यवाद-सिद्धान्त है जो सांख्यदर्शन से संबद्ध है। यह सद्वाद है। तृतीय अधिकरण का नाम अनिर्वचनीयकार्यवाद का सिद्धान्त है, जो वेदान्तमत है। यह सदसद्वाद दोनों पक्ष को स्वीकार करता है।

पञ्चम अध्याय का नाम आत्मगुणवाद-विमर्श है। इसके प्रथम अधिकरण में प्राणमूलक सृष्टि का वर्णन कृष्णयजुर्वेद के आलोक में किया गया है। यह असद्वाद है। द्वितीय अधिकरण में वाङ्मूलक सृष्टि का वर्णन सामवेद के आधर पर किया गया है। यह सद्वाद का सिद्धान्त है। तृतीय अधिकरण में मनोमूलक सृष्टि का वर्णन शुक्लयजुर्वेद के आधार पर किया गया है। यह सदसद्वाद से संबद्ध है। चतुर्थ अधिकरण में ऐकात्म्यमूलक-सृष्टि का वर्णन सभी वेदों के आलोक में किया गया है। यह सिद्धान्त भी सदसद्वाद से संबद्ध है।

छठे अध्याय का नाम सामञ्जस्य विमर्श है। इसके प्रथम अधिकरण में प्राक्-अभाव कारणतावाद विषयक न्यायमत का विवेचन है जो असद्वाद से संबद्ध है। द्वितीय अधिकरण में संभूति-विनाश-प्रकृतिवाद का सिद्धान्त प्रतिपादित है जो सांख्यदर्शन का सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त सद्वाद को प्रतिपादित करता है। तृतीय अधिकरण का नाम विद्या-अविद्या-प्रकृतिवाद है जो वेदान्त का मत है। इसका संबन्ध सदसद्वाद से है।

सातवें अध्याय का नाम अव्यक्त विमर्श है। इसके प्रथम अधिकरण में बल की एकता का प्रतिपादन अव्यक्त-बीजत्व-सिद्धान्त के रूप में किया गया है। यह विनाश को मानने वाले सौगत का मत है। यह सद्वाद से संबद्ध है। द्वितीय अधिकरण का विषय सत्त्व, रजस् और तमस् का अव्यक्त-बीजत्व-सिद्धान्त विमर्श है। यह कापालिक मत है। इस सिद्धान्त का सद्वाद से संबन्ध है। तृतीय अधिकरण का नाम अक्षर की एकता के रूप में अव्यक्त-बीजत्व का सिद्धान्त है। यह ब्रह्मसूत्र के अनुसार बादायण मुनि का सिद्धान्त है। यह सदसद्वाद से संबद्ध है।

सदसद्वादविमर्श नामक इस राष्ट्रीय संगोष्ठी में मुख्य वक्ता के रूप में अपने वक्तव्य में प्रो. गोपाल प्रसाद शर्मा, आचार्य, वेद विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली ने कहा कि यह ग्रन्थ दार्शनिक सिद्धान्तों का विश्लेषण करता है। उन्होंने ओझा जी के अन्य ग्रन्थों दशवादरहस्य, महर्षिकुलवैभवम्, व्योमवाद एवं पण्डित मोतीलाल शास्त्री के पञ्चव्याख्यान नामक ग्रन्थों में प्रतिपादित सत्, असत् और सत्-असत् के स्वरूप को उद्घाटित किया। उन्होंने कहा कि पं. ओझा जी के व्योमवाद में भी सदसद्वाद की चर्चा उपलब्ध है। पं. ओझा जी ने 'सत्' से संबन्धित तैत्तिरीयोपनिषद् के वचन को उद्धृत किया है, जिसके अनुसार यदि कोई सामान्य जन ब्रह्म असत् है ऐसा समझता है तो वह स्वयं असत् हो जाता है। यदि वही व्यक्ति 'ब्रह्म है' ऐसा

समझता है तो वह व्यक्ति सत् हो जाता है। अर्थात् ब्रह्म को केन्द्र में रख कर सत् और असत् का निर्धारण यहाँ किया गया है-

**'असन्नेव स भवति असद्ब्रह्मेति वेद चेत्।**
**अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेद सन्तमेनं ततो विदु ॥'**

- तैत्तिरीयोपनिषद् २.६

विशिष्ट वक्ता के रूप में विषय को स्पष्ट करते हुए प्रो. प्रभाकर प्रसाद, आचार्य, सर्वदर्शन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली ने सदसद्वादग्रन्थ में प्रतिपादित सांख्य, वैशेषिक एवं वेदान्त के सिद्धान्त को स्पष्ट करते हुए कहा कि पूर्व के अधिकरणों में सृष्टि के कारण का निरूपण किया गया है। कारण को स्पष्ट करने के बाद पं. ओझाजी ने कार्य को स्पष्ट किया है। संपूर्ण सृष्टि कार्य है और उसका कारण तत्त्व ब्रह्म है। कार्यकारण सम्बन्धी असत्कार्यवाद वैशेषिक का सिद्धान्त है, सत्कार्यवाद सांख्यदर्शन का सिद्धान्त है और अनिर्वचनीयतावाद वेदान्त का सिद्धान्त है। वैशेषिक और न्याय दर्शन के अनुसार मिट्टी कारण है और घड़ा कार्य है। मिट्टी है परन्तु उस मिट्टी में घड़ा नहीं है। घड़ा का स्वरूप असत् है लेकिन कारणरूप मिट्टी में उस घड़े की सत्ता है। ओझा जी ने घड़ा को बल और कर्म कहा है। मिट्टी भी बल है। उस मिट्टी स्वरूप बल में सत्ता के रूप में विद्यमान यह घड़ा है। जो घड़ा रूप कार्य उत्पन्न होता है वह असत् है परन्तु वही असत् घड़ा कुछ समय के बाद सत् हो जाता है। यही वैशेषिक और न्याय का मत है।

**यथास्ति मृत्सा न घटोऽस्ति तस्याम् असन् घटस्तत्र दधाति सत्ताम्।**
**घटो बलं कर्म च मृद्बलस्थं सत्तामुपादाय विभाति तावत् ॥**
**यत्कार्यमुत्पद्यत एतदासीद् असत् पुरा सद्भवतीह पश्चात् ।**
**वैशेषिकैरेष निरूपितोऽर्थो नैयायिकैश्चाभिमतोऽयमर्थः ॥**

- सदसद्वाद, पृ.३५ कारिका-४

डॉ. राघवन के. टी. वी., शोध अधिकारी, पुडुचेरी क्षेत्रीय केन्द्र, इन्दिरा गाँधी कला केन्द्र, नई दिल्ली ने सदसद्वाद ग्रन्थ के प्रारम्भ में वर्णित द्रष्टा, दृश्य और दृक् (इन्द्रिय) इस त्रिपुटी पर अपना व्याख्यान प्रस्तुत किया। द्रष्टा अर्थात् देखने वाला दृश्य अर्थात् यह संसार ये दोनों तत्त्व अलग-अलग हैं। द्रष्टा आन्तरिक है और दृश्य जगत् ही बाह्य जगत् है। द्रष्टा को ही दार्शनिक भाषा में प्रमाता कहते हैं वही विषयी भी कहलाता है। द्रष्टा को ही पं. ओझा जी ने 'सत्' कहा है। उन्होंने ज्ञाता को ब्रह्म कहा है। वह ब्रह्म संसार रूपी अर्थ से भिन्न भी नहीं है। दृश्य जगत् को प्रमेय कहा गया है। यही प्रमेय विषय कहलाता है। इसी को ओझा जी ने 'असत्' शब्द से प्रतिपादित किया है। असत् अर्थ को ज्ञेय और कर्म कहा है । यह भी संसार से भिन्न नही है।-

**पश्यामि विश्वं मम दर्शनेऽस्मिन् द्रष्टा च दृश्यं च पृथक् विभाति ।**
**द्रष्टान्तरः कश्चिदभिन्न एको दृश्यानि भूयांसि बहिःस्थितानि॥**
**द्रष्टा प्रमाता विषयी सदर्थो ज्ञाता च ब्रह्मेति न भिद्यतेऽर्थः ।**
**दृश्यं प्रमेयं विषयोऽसदर्थो ज्ञेयं च कर्मेति न भिद्यतेऽर्थः ॥**

- सदसद्वाद, पृ.१, कारिका २-३

विशिष्ट अतिथि के रूप में सम्बोधित करते हुए अपने वक्तव्य में डॉ. भवनाथ झा, संपादक, शोध एवं प्रकाशन विभाग, महावीर मन्दिर, पटना ने सदसद्वादग्रन्थ में वर्णित बौद्ध सिद्धान्त के अन्तर्गत आर्यचतुष्टय और पञ्चस्कन्ध की चर्चा की। उन्होंने कहा कि सांसारिक दुःख क्षणिक है। यही क्षणिकविज्ञान बौद्धदर्शन में प्रसिद्ध है जिसका स्पष्ट वर्णन ओझाजी ने इस सदसद्वाद नामक ग्रन्थ में किया है।

श्री शंकर शिक्षायतन के समन्वयक प्रो. सन्तोष कुमार शुक्ल ने अपने वक्तव्य में कहा कि पं. ओझा जी ने इस सदसद्वाद ग्रन्थ को सात विषयों के आधार पर इसका वर्गीकरण किया है। इस विषय विभाग को पं. ओझा जी ने इस ग्रन्थ के पहले पृष्ठ पर ही उल्लेख किया है। ये सात विषय हैं- प्रत्यय, प्रकृति, ऐकात्म्य (एकरूपता), कार्य, गुण, सामञ्जस्य (परस्पर संबन्ध) एवं अक्षर का विमर्श । पुनः इन सातों विषयों को सत्, असत् और सत्-असत् इन तीनों में विभक्त कर कुल २१ विषय बनते हैं।-

**प्रत्यय एवं प्रकृतिश्चैकात्म्यं चाभिकार्यं च ।**
**स्वगुणाः सामञ्जस्यं चाक्षर इति सप्तधा विमर्शाः स्युः।**
**प्रत्येकमेषु सन्ति त्रयो विकल्पा असच्च सत् सदसत् ।**
**तेनायं एकविंशी सदसद्वादो निरूप्यते सम्यक् ॥**

- सदसद्वाद, पृ.-१, कारिका-१-२

उन्होंने बताया कि विषय को स्पष्ट एवं सरल करते हुए शतपथब्राह्मण का उद्धरण देकर पं. ओझा जी ने प्राण को असत्, वाक् को सत् और मन को सत्-असत् दोनों कहा है।

कार्यक्रम के अध्यक्ष प्रो. सत्यप्रकाश दुबे, पूर्व निदेशक, पं. मधुसूदन ओझा शोध प्रकोष्ठ, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर ने ओझा जी प्रणीत दशवाद ग्रन्थों का उल्लेख करते हुए उनमें प्रतिपादित सृष्टिविषयक गूढतत्त्वों की ओर ध्यानाकर्षण कराया। उन्होंने कहा कि पं. ओझा जी के प्रधान शिष्य पं. मोतीलाल शास्त्री जी ने पने ग्रन्थों में सृष्टिविषयक बारह वादों का उल्लेख किया है। यह सदसद्वाद ग्रन्थ दार्शनिक सिद्धान्तों का सरलतापूर्वक निरूपण करते हुए सृष्टिविषयक सत्, असत् एवं सत्-असत् विषयक तत्त्वों का प्रतिपादन करने वाला एक विशिष्ट ग्रन्थ है।

इस एक दिवसीय राष्ट्रीय वेब संगोष्ठी का संचालन डॉ. लक्ष्मी कान्त विमल, वरिष्ठ शोध अध्येता, श्री शंकर शिक्षायतन ने तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ. मणि शंकर द्विवेदी, वरिष्ठ शोध अध्येता, श्री शंकर शिक्षायतन ने किया । कार्यक्रम का शुभारम्भ वैदिक मङ्गलाचरण के रूप में शिवसङ्कल्पसूक्त के पाठ से एवं समापन शान्तिपाठ से हुआ। इस कार्यक्रम में देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं अन्य प्रतिष्ठित शैक्षणिक संस्थानों के शताधिक प्राध्यापकों एवं शोधार्थियों ने अपनी सक्रिय सहभागिता से इस कार्यक्रम को सफल बनाया।